ओ३म् तत्सत्

अग्निहोत्र यज्ञ विज्ञान की दृष्टि में

स्वामी विवेकानन्द सरस्वती



च ७/३६६८

प्रवर्त्तमानिका

प्राचीन भारतीय परम्पराओं एवं रीति रिवाजों का, जिनको लोक की सरल भाषा में धर्माचरण, धार्मिक कृत्य तथा कर्मकाण्ड भी कहा जाता है, यदि हम थोड़ा-सा भी अन्दर प्रवेश कर रहस्यान्वेषी प्रज्ञा से किञ्चित् भी अध्ययन करें, तो उन अपने पूर्वजों, साक्षात्कृत् धर्मा लोकसङ्ग्रहार्थी ऋषियों के प्रति, जिन्होंने प्रभुवाणी वेद के गूढ़ रहस्यों को समझ कर तदनुसार इन परम्पराओं का समाज में प्रचलन करवाया, हमारा शीश श्रद्धा से प्रणत हो जाता है। उन तत्त्वज्ञानी ऋषियों के परम प्रताप से गौरवान्वित वैदिक मतावलम्बी हम भारतवासी जन गर्व से मस्तक उठाकर कह सकते हैं कि भौतिकता की चकाचौंध से चौंधियायी आँखों के कारण हुई लोभोन्मुखी अपनी अन्धवृत्ति से विज्ञान का आश्रय ले प्रकृति के साथ मनमानी छेड़खानी एवं खिलवाड़ करने वाला मानव अब जब अपने किये कृत्यों के दुष्परिणामों से भयग्रस्त एवं अशान्त हो रहा

है, तब विज्ञान के इस तथ्यान्वेषी जिज्ञासु युग में भी केवल भारतीय धर्म एवं तदङ्गीभूत परम्परायें तथा रीति-रिवाज ही उसके लिये एक मात्र शरणागति हो सकते हैं। लोभ तथा मोह से आबद्ध अपने प्रयत्नों से अपने ही विनाश को निकट आते देख व्याकुल-चित्त हुई मानव जाति को केवल हमारा धर्म ही शान्ति और प्रकृति का सरल मार्ग निर्दिष्ट कर सकता है।

क्योंकि, वर्तमान समय में समृद्धि तथा प्रभुत्व की लालसा में किये जा रहे उसके विज्ञानानुरोधी परीक्षण एवं अनुसन्धान जब उसको ही लील जाने की विभीषिका उत्पन्न करने लगे हैं, प्रकृति को वश में करने की इच्छा से किया गया उसका प्रयास जब उसकी ही दुर्गति कर उसे पञ्च-तत्त्वों में लीन करने को उत्साहित होने लगा है, उसका पोषण करने वाला वायु जब उसके द्वारा किये गये विभिन्न परीक्षणों से उत्पन्न विषाक्त रासायनिक विकृतियों के द्वारा जब उसके ही शोषण को सन्नद्ध लगने लगा है, उसको जीवन-तत्त्व प्रदान करने वाला जल उसके द्वारा सञ्चित प्रदूषित मल की घुट्टी जब उसे ही पिलाने लगा है, उसकी

छेड़खानी से क्रुद्ध आग्नेय किरणें प्रकृति-प्रदत्त उसके संरक्षक आवरण (ओजोन परत) को लांघ जब उसे ही भस्मसात् करने को उत्सुक होने लगी हैं, प्राकृतिक सन्तुलन को धारण करने वाले वनों को लोभ के वशीभूत हो निर्ममता के साथ उजाड़ने से उत्पन्न (आकाशीय) पर्यावरण समस्या की भयावहता जब उसके मस्तिष्क में भी सिहरन उत्पन्न करने लगी है, कृत्रिम उर्वरकों एवं कल-यन्त्रों की सहायता से उसके द्वारा किये गये भूमि के सतृष्ण दोहन के फलस्वरूप समागत मरुता जब विनाशकारी भयङ्कर अभाव की अवश्यम्भाविता के परिचय से ही उसका हृदय दहलाने लगी है, इसी प्रकार पारमाणविक विस्फोटों से उत्पन्न रेडियोधर्मी किरणों के समक्ष अपनी असहाय अवस्था को जान, कल-कारखानों के विषैले धुएँ से हुई कार्बन-वर्षा को देख, कीटों एवं कीटाणुओं के विनाश हेतु निर्मित रासायनिकों के फैलते प्रभाव से अपने को ही विनाश के गर्त में धकेला जाता हुआ पाकर, अब जब आज का विषण्ण मानव किङ्कर्त्तव्यविमूढ़ हो सम्भ्रम को प्राप्त हो रहा है—तब केवल अब हमारे भारतीय

धर्म एवं संस्कृति की प्रकाश-किरणें ही उसकी रक्षा करती हुई उसको जीवन का सरल एवं सुगम पथ दिखा सकती हैं। ऐसी भयावह परिस्थितियों में तो, निश्चय मानिये, केवल प्राचीन ऋषियों द्वारा वेदानुसार प्रतिपादित निर्विघ्न पद्धति ही इसके जीवन को सुख और समृद्धि के लक्ष्य तक पहुँचा सकती है।

इसीलिए आज का संत्रस्त मानव अब इस ओर आने की चेष्टा कर रहा है, किन्तु कहावत है—दूध का जला छाछ को भी फूँक-फूँक कर पीता है कि कहीं उसी सम्भ्रम की स्थिति में यहाँ भी न पहुँच जाये। अतः वह अपने सीमित ज्ञान-विज्ञान एवं उपकरणों से ही हमारी सांस्कृतिक परम्पराओं, रीति-रिवाजों, हमारे शास्त्रों को भी परखना चाह रहा है। (लगता तो यह ऐसे ही है जैसे मेंढक अपनी छलांगों से समुद्र को मापना चाह रहा हो।) लेकिन स्वर्ण का तो निष्कर्षों-कसौटियों पर घिसना, रगड़ना, पीटना यहाँ तक कि अग्नि-परीक्षण भी उसके ही लाभ में होता हुआ उसकी उज्ज्वलता को बढ़ाकर उसे और अधिक निखार देने वाला होता है जिससे उसकी प्रामाणिकता को न स्वीकार करने वाले

दुरभिमानी अबोधजन हतप्रभ हो नतमस्तक हो जाते हैं। अतः प्राप्त आश्चर्यजनक परिणामों और उपलब्धियों से प्रत्येक परीक्षक अनुसन्धाता की आँखें फटी-की-फटी रह जाती हैं। भारतीय जीवन-पद्धति के किसी भी अङ्ग के अध्ययन में उसे महान् रहस्य तथा गागर में सागर का भान होने लगता है। उसकी उत्सुकता बढ़ती जाती है, अब बड़ी साज-सज्जा में सारे करण-उपकरणों के निरीक्षण में उसने **अग्निहोत्र यज्ञ** किया। उसके उपकरणों का अध्ययन हमारे शास्त्रों के स्वर में स्वर मिला कर कह उठा–

'स्वर्गकामो यजेत'

(सुख की पराकाष्ठा चाहते हो तो यज्ञ करना चाहिए)

उसने हवन की भस्मीभूत सामग्री का छोटे पौधों, वृक्ष-वनस्पतियों पर सिञ्चन किया, उनकी शाखा-प्रशाखाओं, फूल-पत्तियों तथा फलों ने मुस्कराकर उसे मधुर संदेश दिया–

'अन्नकामो यजेत'
'धनकामो यजेत'

उसने अपनी बुद्धि से (उत्सुकतावश ही सही) प्रजनन में असमर्थ तथा रुग्ण पशु-पक्षियों को उसके धूम तथा भस्मी का सेवन कराया तो पाया कि अपनी स्वस्थ सन्तति के साथ वे स्वस्थ प्राणी समवेत स्वर में उससे कह रहे हैं–

'पुत्रकामो यजेत'
'आयुष्कामो यजेत'

वह परीक्षण करता जा रहा है और यज्ञ के नित-नये लाभों से उसकी उत्सुकता बढ़ती जा रही है।

उसने भारतीयों के लिये '**मातृवत् पूज्या गौ**' को अपने अनुसन्धान का क्षेत्र बनाया, तब पारमाणविक विस्फोट की परिस्थितियों में भी **गौ दुग्ध** को विस्फोटक त्रासदीपूर्ण परिणामों से अप्रभावित देख उसको महान् आश्चर्य हो रहा है, तो कभी **गोबर के लेप** से ही रेडियोधर्मी प्रभाव को विफल देख उसकी अनुसन्दिधित्सा श्रद्धा एवं विश्वास में परिणत हो रही है, कभी गोमूत्र से चर्म-रोगों में विस्मयकारी परिवर्तन देख उसको रोमाञ्च हो रहा है, और अब गोमण्डल के श्वास मात्र

से ही अनेक कीटाणुओं को विनष्ट होते देख उसके रोम-रोम ने साक्षी देनी प्रारम्भ कर दी–

'गावो विश्वस्य मातरः'

इसी प्रकार वह उत्सुकतावश अनुसन्धान करता जा रहा है। कभी **वेदमन्त्रों के सस्वर उच्चारण**, तो कभी **भारतीय शास्त्रीय सङ्गीत** के निनाद उसके अनुसन्धान की परिधि में आते जा रहे हैं और भारतीय वैदिक सभ्यता एवं उसकी प्राचीन संस्कृति के पथ पर चलने में उसका उत्साहवर्धन करते जा रहे हैं।

वह भी उत्साहित होकर औत्सुक्य से भारतीय शास्त्रों के अनुशीलन में प्रवेश कर रहा है। आयुर्वेद (चिकित्सा) वाङ्मय को देख जहाँ उसका शीश ऋषियों के प्रति श्रद्धा से झुक रहा है, वहीं गणित और ज्योतिष् की भारतीय परम्परा को अपने आधुनिक विज्ञान से अत्युन्नत देख उसका गर्व विगलित होता जा रहा है, वैमानिक शास्त्रों को देख वह विनम्रतापूर्वक स्वीकार कर उठता है कि यहाँ की सुविकसित प्राचीन सभ्यता में अवश्य '**पुष्पक**' जैसे विमानों की संरचना रही होगी।

भारतीय भाषा एवं लिपि के वर्णोच्चारण क्रम को देख उसका मस्तिष्क कह उठता है कि जब अक्षरमाला के विन्यास की यह अद्भुतता है तो ग्रन्थों की तो बात ही न कर! यहाँ तो प्रयुक्त पद और वाक्य ही महान् अनुसन्धान की अनिवार्यता रखते हैं। भारत की सांस्कृतिक भाषा 'संस्कृत' की गणितीय नियमबद्धता देख वह विस्मित हो रहा है।

शास्त्रों का अध्ययन किया जा रहा है, उनमें वृक्षों की महत्ता का प्रतिपादन देख, जिनमें यहाँ तक कह दिया गया है–'**दशपुत्रसमं तरु**' (पुत्र के लिये कहा गया है कि वह माता-पिता के दुःखों एवं कष्टों का निवारण कर सुख प्रदान करने वाला होता है किन्तु अकेला तरु (वृक्ष) दश पुत्रों जितने सुख को देने वाला होता है जिसकी अन्वर्थ व्युत्पत्ति '**तारयति जनान् दुःखसागरात् इति तरु**' इस प्रकार की गयी है, और इसीलिये प्राचीनकाल से ही हमारी संस्कृति में वृक्षारोपण एवं उन पर रक्षासूत्र बांधकर उनके रक्षण-पोषण को विशेष महत्त्व दिया जाता रहा है) इत्यादि वचनों को पढ़कर उसका मन ग्लानि से भर उठा। वह सोच रहा है कि काश! मैं पहले

ही इनसे लाभान्वित हो पाता। प्रथम तो मैंने वनों को असभ्यता का प्रतीक मानकर और कुछ लोभ के वशीभूत हो वन-के-वन साफ कर दिये और अब इन सबसे हुई हानियों को भुगत रहा हूँ।

अतः पश्चात्ताप करते हुए वह अपनी शक्ति वृक्षारोपण पर लगा रहा है, क्योंकि उसने अनुसन्धान द्वारा भी यह जान लिया है कि वृक्ष जीवनोपादेय प्राण-तत्त्व का उत्सर्जन करते रहते हैं, इनमें भी वह वट तथा अश्वत्थ (पीपल) के वृक्षों के योगदान से अत्यन्त अभिभूत है जो दीर्घजीवी होने के साथ अहर्निश मानव के रक्षण हेतु जीवनप्रवर्तक ओषजन (आक्सीजन) का सृजन एवं विसर्जन करते रहते हैं, इसी हेतु वह इनके काटने पर तो पूर्ण प्रतिबन्ध भी लगाना चाह रहा है, जबकि यह तथ्य तो अनादिकाल से ही हमारी भारतीय परम्परा में चलता आ रहा है, सामान्यतया इनकी लकड़ी जलाने का शास्त्रों में निषेध किया है, **बल्कि इनकी सब प्रकार से रक्षा एवं पूजा (सम्वर्धन) का विधान करते हुए इनसे सम्बद्ध अनेकानेक पर्वों, रीति-रिवाजों की परम्परा जन समाज में डाली**

गयी। पीपल के महत्त्व के विषय में तो कहा गया है–

'अश्वत्थः सर्ववृक्षाणाम्'

–गीता, अध्याय १०/२६

विज्ञ पाठकगण! जरा सोचिये!! थोड़ा विचारिये!!! इस प्रकार पूर्व तो पङ्क में पैर धँसा तदन्तर उसकी शुद्धि के लिये व्याकुल होने से क्या? अच्छा तो यही है कि पङ्क से सावधान हो उससे दूर रहते हुए ही उसका उपाय किया जाय। समय रहते हुए ही सतर्क हो चेता जाय।

'फिर पछताये होत क्या,
जब चिड़िया चुग गयी खेत।

किन्तु

खेद! महाखेद!
दुःख! महादुख!
शोक! महाशोक!

उधर भौतिकतावादी संस्कृति के हमारे बिछड़े हुए साथी अब पुनः हमारी ओर आना चाह रहे हैं। एक

तरफ जहाँ विदेशी दूतावासों के अधिकारी हमारी शोभायात्राओं के पथ पर झाड़ू लगाने में गौरव अनुभव कर रहे हैं; दूसरे देशों के निवासी भारत की तीर्थयात्रा करने में, गङ्गा के पवित्र जल को यहाँ से अपने देश ले जाने में आध्यात्मिक शान्ति का लाभ प्राप्त कर रहे हैं; और तो और, वे हमारे शास्त्रों पर अनुसन्धान कर उन पर अधिकार भी प्राप्त करना चाह रहे हैं; अन्तरिक्ष-यात्रा जैसे सुदुष्कर अभ्यास के लिए योगासनों की उपयोगिता को उनके ही द्वारा स्वीकारा जा रहा है; दूसरी तरफ तब वहीं हमारे तथाकथित भारतीय बुद्धिजीवी अपने ही भारतीय कर्मकाण्डों तथा आचार-संहिताओं को ढकोसला बता रहे हैं, भारतीय शास्त्रों और उनके अनुयायियों को पोंगापन्थी, दकियानूसी कहने में उन्हें गर्व का अनुभव होता है, **अग्निहोत्र (यज्ञ)** जैसे सर्वधारक कल्याणकारी कृत्य के प्रयोगसिद्ध लाभों को अयथार्थ मान उनको संयोगवश प्राप्त तथा अन्धविश्वासों से परिपूर्ण बतलाने में उन्हें किञ्चित्मात्र भी तो लज्जा का अनुभव नहीं हो रहा है। उन्हीं की देखादेखी आज का प्राथमिक श्रेणियों में ही

अध्ययनरत हमारा विद्यार्थी भारतीय अस्मिता को सगर्व तिरस्कृत करने में अपने को सभ्य एवं विकसित अनुभव करता है। कारण कि—इन्हीं बुद्धिजीवियों के जाने-अनजाने आचरणों एवं उपदेशों से उसके मन में बाल्याकाल-शैशवावस्था से ही यह बैठा दिया जाना कि हमारा प्राचीन धर्म एवं संस्कृति व सभ्यता जङ्गलियों के अविकसित मस्तिष्क की उपज है, जिनमें ग्राम्यत्व व पिछड़ापन है, उनको छोड़कर ही सभ्यता एवं विकास के उन्नत पथ पर बढ़ा जा सकता है। और गिने-चुने जो कुछ लोग श्रद्धा रखते भी हैं वे भी इसको कालातीत मान वर्तमान में अनुपयोगी कहकर दूसरों के पीछे भेड़-चाल में चलने में सुख का अनुभव कर रहे हैं, और जो कुछ उपयोगी मानते भी हैं वे लोकलज्जा के कारण इनसे दूर रहना ही श्रेयस्कर समझ रहे हैं कि कहीं हमको असभ्य एवं पिछड़ा हुआ, दकियानूस, पोंगापन्थी न मान लिया जाय।

तो बस उन नास्तिकों-अर्धनास्तिकों के कल्याण हेतु ही तपोमूर्ति, ज्ञान के भण्डार, योगसंसिद्ध, श्रद्धेय

गुरुवर्य **श्री स्वामी विवेकानन्द सरस्वती जी महाराज** के कृपापूर्ण आशीर्वाद के रूप में प्रस्तुत लघु पुस्तिका **श्री स्वामी समर्पणानन्द वैदिक शोध संस्थान, गुरुकुल प्रभात आश्रम, भोला, मेरठ-२५०५०१ (उ० प्र०)** की ओर से प्रकाशित की जा रही है। संस्थान के अनुरोध को स्वीकार करते हुए—**हम नहीं वे क्या कहते हैं (जिनके परत्यक्त, उच्छिष्ट, भोजनास्वादन में हमारे बुद्धिजीवी सम्मान एवं गौरव अनुभव करते हैं)—दुर्जनतोष न्याय** का अनुसरण करते हुए इनके मान्य आधुनिक विज्ञान के प्रयोगोपरान्त प्राप्त विभिन्न निष्कर्षों से परिपूर्ण '**अग्निहोत्र यज्ञ—विज्ञान की दृष्टि में**' शीर्षक से इस पुस्तक की संरचना की। अन्यथा श्रद्धास्पद श्री महाराज जी द्वारा अङ्गीकृत जीवन-पद्धति ही हमारे लिए परम प्रमाण हो सकती है।

हम सभी कुलवासियों एवं गुरुकुल के परिचितों के प्रत्यक्ष में अग्निहोत्र (यज्ञ) द्वारा वनस्पतियों की विकृत प्रजाति का संशोधन, खेतों एवं फूल-पौधों से कीट-निवारण, मानवों तथा गौओं के रोगों का विनाश इत्यादि विविध प्रयोग संस्थान के अन्तर्गत गुरुकुल-भूमि

में श्री महाराज जी के आचार्यत्व में चलते ही रहते हैं और यज्ञ-प्रयोग द्वारा वृष्टि के विषय में तो केवल गुरुकुलवासी ही नहीं अपितु **सुनेहड़ा, मंऊ कलाँ चौगामा क्षेत्र (मेरठ मण्डल)** आदि के अनेकानेक ग्रामवासी कृषकगण प्रत्यक्षद्रष्टा रहे हैं, जब निर्धारित समय पर ऋषियों की वाणी और अपनी परम्परा को स्वयं सिद्ध होता देखा गया है। इन सब प्रत्यक्षदृष्ट निष्कर्षों के आधार पर हम पूर्ण विश्वास से साथ बेखटक कह सकते हैं कि **उचित परिमाण एवं उचित समय में उचित (पूर्ण) विधि द्वारा किया गया अग्निहोत्र (यज्ञ) आदि का प्रयोग शत-प्रतिशत लाभ देने वाला होता है** (जिनका विवरण हम संस्थान से प्रकाशित होने वाली त्रैमासिक पत्रिका '**पावमानी**' में समय-समय पर प्रस्तुत करते रहते हैं)।

किन्तु कितनी त्रासदीयुक्त विडम्बना है कि अपने पूर्ण प्रमाणित विज्ञान को दूसरों के अधकचरे विज्ञान से तोलें। कैसी विवशता है! पूर्ण लक्ष्य को प्राप्त प्राचीन विचारधारा अपने रक्षण एवं प्रसार हेतु आज की अस्थिर विचारधारा का मुँह जोहे!

पुनरपि समय की माँग को देखते हुए संस्थान का मुख्य

उद्देश्य यही रहा कि अवसर रहते हुए भारतीय समाज को चेताया जाय। ऐसा न हो कि दूसरे लोग ही हमारे शाश्वत सत्यों को अपनी आधी-अधूरी जानकारी से अपनाकर हम पर ही धौंस जमाने लगें। (**क्या जिन्हें दूसरों को प्रकाश दिखाना था उन्हें ही अपनी अभ्युन्नति का मार्ग पुनः प्राप्त करने में अब दूसरों के निर्देशन की प्रतीक्षा करनी होगी?**)

अथवा कहीं ऐसा न हो, अभिमान से उत्पन्न अविश्वासपूर्ण सम्भ्रम की स्थिति में रहता हुआ आज का मानव अपने अपरिवर्तित कृत्यों से सम्पूर्ण प्राणी जाति को ही विनाश के गर्त में धकेलता चला जाय।

तुम जो सोचो वह तुम जानो हम तो अपनी कहते हैं।
देर न करना घर आने में वरना घर खो जायेंगे।

अन्त में हम अपने श्रद्धेय श्री गुरुदेव जी महाराज से कृतज्ञतापूर्वक निवेदन यह करेंगे कि अपने अमूल्य समय से थोड़ा समय निकाल इसी प्रकार लोक-सङ्ग्रहार्थ अन्य विषयों पर भी प्रकाश डाल सदैव हमारा पथ प्रशस्त करते रहेंगे। साथ ही संस्थान का जनता-जनार्दन

पर भी पूर्ण विश्वास है कि जहाँ वह इस लघु प्रकाशन का स्वागत तो करेगी ही, वहीं संस्थान यह आशा भी अपने सभी प्रेमी पाठकों से रखता है कि वे इसे केवल अपने तक ही सीमित न रखेंगे, अपितु अपने सभी पारिवारिक जनों, पुत्र-पौत्रों, सम्बन्धियों, इष्टमित्रों तथा परिचितों को भी इसका स्वाध्याय अवश्य कराते हुए स्वयं अपने आप इस पर आचरण तो करेंगे ही, साथ-साथ अन्यों को भी इस लाभपुञ्ज अग्निहोत्र को अपनाने के लिए प्रेरित करते रहेंगे। क्योंकि इसमें संशय नहीं–

'धर्म एव हतो हन्ति धर्मो रक्षति रक्षितः'।

आपका, अपना ही

वाचस्पति मिश्र

सचिव

स्वामी समर्पणानन्द वैदिक शोध संस्थान

गुरुकुल प्रभात आश्रम,

भोला, मेरठ–२५०५०१ (उ०प्र०), भारत

अग्निहोत्र यज्ञ
विज्ञान की दृष्टि में

हमारे भारतीय विद्वानों की प्रायः यह दुष्प्रवृत्ति हो गयी है कि वे पाश्चात्य विद्वानों का अन्धानुकरण करना अपना सौभाग्य समझते हैं और उनकी निराधार मान्यताओं की पुष्टि करने में गौरव अनुभव करते हैं। जैसा कि प्रयोग-प्राप्त निष्कर्षों से यह सिद्ध है कि **यज्ञ हमारे विज्ञानवेत्ता ऋषियों द्वारा सुपरीक्षित एक कल्याणकारी दैनिक नैमित्तिक कर्तव्य है। उसकी उपयोगिता हमारे जीवन को स्वस्थ, पुष्ट एवं सुखमय बनाने में भोजन एवं औषधि से भी अधिक उपयोगी है। वर्तमान में पर्यावरण आदि विविध समस्याओं में उलझे हुए विश्व की रक्षा करने का यह एक निरापद अमोघ उपाय है** और यदि हम इसे ऋषियों द्वारा प्रदत्त **मानवता के लिये वरदान** कहें तो यह उचित ही है। किन्तु दुःख इस बात का है कि इस

प्रक्रिया का हमारे विद्वान् सर्वत्र प्रचार-प्रसार करने के स्थान पर इसको केवल धार्मिक कृत्य मान बैटे हैं और जनता के सम्मुख इसके महत्त्व को न्यून करके प्रस्तुत करते हैं। उनकी इस भावना का स्पष्टीकरण करके यज्ञ के उदात्त स्वरूप एवं महत्त्व को मैंने पिछले दिनों पाठकों के समक्ष रखा था। आज पुनः इसी विषय को विशुद्ध पाश्चात्य वैज्ञानिक पद्धति से ही परीक्षित प्रमाणों एवं निष्कर्षों से विज्ञ पाठकों का परिचय कराना मैं अपना कर्त्तव्य समझता हूँ। आशा है पाठक अवधानपूर्वक इसका अध्ययन करेंगे एवं यज्ञ के प्रति पूर्ववत् अपनी आस्था बनाए रखेंगे और उन विद्वानों के कुचक्र से सावधान रहेंगे। पाठकों की सुविधा के लिये इस पद्धति की पुष्टि में जमुनालाल बजाज पुरस्कार से पुरस्कृत **सुश्री सरला देवी (कैथरीन मेरी हाइलामन)** द्वारा लिखित '**संरक्षण या विनाश**' पुस्तक का परिशिष्टाध्याय-चार सम्पूर्ण ही प्रस्तुत कर रहा हूँ जिससे पाठक लेखिका की भावनाओं एवं अनुसन्दिधित्सु प्रवृत्ति का ज्ञान भी प्राप्त कर सकेंगे।

इस अध्याय को पढ़ने के पश्चात् हमारे भारतीय

अन्धे विद्वानों की आँखें खुलेंगी एवम् अग्निहोत्र के लाभों को अन्धविश्वास कहने की दुष्प्रवृत्ति निरुद्ध होगी, **यज्ञ अपने आप में स्वयं पूर्ण विज्ञान है**, इसका उन्हें बोध भी होगा।

आधुनिक प्रयोगशालाओं से पुरातन भारतीय विज्ञान का पुष्टीकरण

कुछ वर्ष पूर्व भारत के आधुनिक वैज्ञानिकों को एक बड़ा धक्का लगा। ये सोचते रहे कि भारतीय संस्कृति के पुराने विचारों के पीछे कोई वैज्ञानिक तथ्य नहीं—अन्धविश्वास ही है। **उस समय रूस के वैज्ञानिकों ने यह समाचार प्रसारित किया कि गाय के गोबर में सक्रिय विकिरणशीलता का प्रतिकार करने की शक्ति है। जो मकान गाय के गोबर से पोता हुआ है, जिस मकान में गाय के गोबर का धुआँ फैलता है, वह मकान सक्रिय विकिरणशीलता से सुरक्षित रहेगा।**

अब कुछ वर्षों से पश्चिम के कई देशों में लोग पा

रहे हैं कि **अग्निहोत्री होम यज्ञ के धुएँ और राख में वायुमण्डल में शुद्धि और समन्वय की वृत्ति को लाने की शक्ति है।** विशेषकर वह जीवमण्डल के हर क्षेत्र में समन्वय लाने के लिये एक आधारिक कड़ी है।

आजकल विश्वभर में हर दिशा में समन्वय की भावना टूट रही है। हमने मान लिया कि वर्तमान समय में व्यक्तिगत और सामाजिक दिलचस्पियों में सङ्घर्ष होना स्वाभाविक है। लेकिन यह दृष्टि गलत है। इस दुनिया में जो कुछ तत्त्व हैं, चेतन या अचेतन प्राण हैं–यह सब यों ही पैदा नहीं हुआ है, यह सब सुनियोजित है, वह युगों के समन्वय की उत्क्रान्ति के क्रम का परिणाम है। सब पुरातन स्थायी धर्मों में माना गया है कि सभी मनुष्यों, अन्य प्राणियों और प्रकृति के साथ समन्वय में रहना मनुष्य का परम कर्तव्य है। प्रकृति की प्रतिक्रियाओं को सम्भालकर ही उनका उपयोग और उपभोग करना चाहिये। इसके लिये यह आवश्यक होता है कि **सांसारिक साधनों से अनासक्त और अलिप्त रहकर इस संसार में आने के अपने कर्त्तव्यों को पूरा किया जाय।**

आजकल बहुत लोग वायुमण्डल के व्यापक प्रदूषण से होने वाली हानि का बुरा प्रभाव समझ पाये हैं। फिर भी उन्हें उस प्रदूषित वातावरण में रहकर उसे सहन करना ही पड़ता है। इससे बहुत मानसिक तनाव पैदा होता है। यह एक नयी और व्यापक जीवन-दृष्टि की खोज का लक्षण है। लेकिन समन्वय की भावना तक पहुँचने की शक्ति और पूरी दृष्टि नहीं होने से (जो आजकल हमारा मुख्य रोग ही है) ये इस नये जीवन के समग्र प्रारूप तक नहीं पहुँच पाते हैं, इसके बावजूद कि ये आधुनिक खण्डीकरण के स्थान पर समन्वय को पैदा करने की आवश्यकता समझते हैं।

विज्ञान और आध्यात्मिकता अब तक अपने को एक दूसरे से परस्पर विरोधी समझते आये हैं। आधुनिक तकनीकी यान्त्रिक विज्ञान ने धर्मों के अन्धविश्वासों का स्थान ले लिया है और सच्ची आध्यात्मिकता की दृष्टि को दबा दिया है। लेकिन अब उन उलझे हुए लोगों के मन में एक और उलझन पैदा हुई है कि तकनीक के गलत मार्ग की वजह से इस तकनीकी समाज में नये भौतिक मूल्य प्रधान होने से

कहीं हमें उन पुराने आध्यात्मिक मूल्यों की ओर तो नहीं लौटना पड़ेगा? इन सब परेशानियों का प्रभाव मन और शरीर दोनों पर एक विपरीत दबाव डालता है। लेकिन औसत में उसका शारीरिक प्रभाव अधिक महसूस होता है। आगे जाकर यह दृष्टि सिर्फ व्यक्तिगत, शारीरिक और मानसिक आरोग्य के प्रश्न तक सीमित नहीं रहती लेकिन सारे जीवन के लिये एक नयी खोज में परिणत हो जाती है। **व्यक्तिगत स्वास्थ्य तथा नैतिक कर्त्तव्य भी पर्यावरणीय चिकित्सा का एक पहलू हैं।** यह नयी व्यक्तिगत और सामाजिक जीवन-पद्धति के लिये चारों ओर से विकसित सहिष्णुता की माँग करती है। **अग्निहोत्री होम (यज्ञ)** का प्रभाव व्यक्तिगत और सामाजिक पर्यावरण पर, शारीरिक और मानसिक असन्तुलन, सब पर पड़ता है।

यज्ञ प्रयोग के परिणाम

मनुष्य के स्वास्थ्य की दृष्टि से जर्मनी की एक प्रयोगशाला में अनुसन्धान हुआ है। **मनुष्य के स्वास्थ्य में चिकित्सकीय या रोग-विरोधी दृष्टि से तथा**

प्राकृतिक वायुमण्डल के शुद्धिकरण और उर्वरकता की दृष्टि से यज्ञ के धुएँ और राख की उपयोगिता सिद्ध हुई। इस यज्ञ से वायुमण्डलीय और पर्यावरणीय स्वास्थ्य बढ़ता है।

वैदिक युग में अवश्य यह मान्यता थी कि यह एक आध्यात्मिक प्रक्रिया ही है। उसी आध्यात्मिकता का प्रभाव वायुमण्डल पर पड़ता है। लेकिन आधुनिक प्रयोगशालाओं में पाया गया है कि निश्चित सामग्रियों से निश्चित समय पर किये हुए होम के प्रभाव के लिये किसी विशेष ज्ञान की आवश्यकता नहीं है (हालांकि यदि यह हो तो उसका मानसिक प्रभाव अच्छा ही होगा) इस कार्य से अपने आप एक निश्चित भौतिक प्रभाव पड़ता है। **अब यह वैज्ञानिक सत्य साबित हुआ है।** मुख्य तौर पर तीन प्रभाव पाए गए हैं—

१. **मनुष्य, पशु और वनस्पति की साधारण विकास-प्रक्रियाओं में सुधार और वृद्धि होती है। मनुष्यों में, विशेषकर अपने साथियों के साथ, अपने वायुमण्डल के साथ समन्वय की शक्ति में सुधार होता है। इसके साथ उसमें**

कहीं हमें उन पुराने आध्यात्मिक मूल्यों की ओर तो नहीं लौटना पड़ेगा? इन सब परेशानियों का प्रभाव मन और शरीर दोनों पर एक विपरीत दबाव डालता है। लेकिन औसत में उसका शारीरिक प्रभाव अधिक महसूस होता है। आगे जाकर यह दृष्टि सिर्फ व्यक्तिगत, शारीरिक और मानसिक आरोग्य के प्रश्न तक सीमित नहीं रहती लेकिन सारे जीवन के लिये एक नयी खोज में परिणत हो जाती है। **व्यक्तिगत स्वास्थ्य तथा नैतिक कर्त्तव्य भी पर्यावरणीय चिकित्सा का एक पहलू हैं।** यह नयी व्यक्तिगत और सामाजिक जीवन-पद्धति के लिये चारों ओर से विकसित सहिष्णुता की माँग करती है। **अग्निहोत्री होम (यज्ञ)** का प्रभाव व्यक्तिगत और सामाजिक पर्यावरण पर, शारीरिक और मानसिक असन्तुलन, सब पर पड़ता है।

यज्ञ प्रयोग के परिणाम

मनुष्य के स्वास्थ्य की दृष्टि से जर्मनी की एक प्रयोगशाला में अनुसन्धान हुआ है। **मनुष्य के स्वास्थ्य में चिकित्सकीय या रोग-विरोधी दृष्टि से तथा**

प्राकृतिक वायुमण्डल के शुद्धिकरण और उर्वरकता की दृष्टि से यज्ञ के धुएँ और राख की उपयोगिता सिद्ध हुई। इस यज्ञ से वायुमण्डलीय और पर्यावरणीय स्वास्थ्य बढ़ता है।

वैदिक युग में अवश्य यह मान्यता थी कि यह एक आध्यात्मिक प्रक्रिया ही है। उसी आध्यात्मिकता का प्रभाव वायुमण्डल पर पड़ता है। लेकिन आधुनिक प्रयोगशालाओं में पाया गया है कि निश्चित सामग्रियों से निश्चित समय पर किये हुए होम के प्रभाव के लिये किसी विशेष ज्ञान की आवश्यकता नहीं है (हालांकि यदि यह हो तो उसका मानसिक प्रभाव अच्छा ही होगा) इस कार्य से अपने आप एक निश्चित भौतिक प्रभाव पड़ता है। **अब यह वैज्ञानिक सत्य साबित हुआ है।** मुख्य तौर पर तीन प्रभाव पाए गए हैं–

१. **मनुष्य, पशु और वनस्पति की साधारण विकास-प्रक्रियाओं में सुधार और वृद्धि होती है। मनुष्यों में, विशेषकर अपने साथियों के साथ, अपने वायुमण्डल के साथ समन्वय की शक्ति में सुधार होता है। इसके साथ उसमें**

अपने जीवन के निजी लक्ष्यों को समझकर उनकी ओर बढ़ने की शक्ति पैदा होती है।

२. पर्यावरणीय अनुरक्षण में सुधार होता है।

३. इस यज्ञ की राख के द्वारा चिकित्सकीय उपचार करने से प्राणियों और वनस्पतियों के तीव्र और दीर्घ रोगों में निरोधक और रोगनाशक शक्ति पैदा होती है। यह राख होमियोपैथिक तथा अन्य चिकित्सकीय पद्धतियों की औषधियों का आधार बन सकती है। (अन्य होमों की राख का उपयोग वनस्पतियों की चिकित्सा में उपयोगी तो है ही लेकिन सिर्फ अग्निहोत्री होम की राख का उपयोग मनुष्यों और पशुओं के रोगों के कामयाब होता है।)

'पर्यावरण'

इस यज्ञ के द्वारा निसर्ग चिकित्सा का ही कार्य सम्पूर्ण नहीं होता है, उसके द्वारा वायु और जल की सफाई और शुद्धिकरण होता है—इससे शुद्ध खुराक

पैदा होती है जो आजकल की दुनिया की प्रदूषित परिस्थिति में एक अति आवश्यक कार्य ही है।

पृथ्वी पर लिपटी हुई जीवदात्री वायुमण्डल की परत बहुत पतली है तथा आजकल सैकड़ों प्रकार के प्रदूषण तथा प्राकृतिक साधनों के अन्धाधुन्ध उपयोग से वह बहुत कमजोर और दूषित हो गयी है। इससे मन में तनाव और शरीर में रोग अपने अपने आप पैदा होते हैं। **अग्निहोत्री यज्ञ** से उसकी प्रक्रियाओं में सुधार होना निश्चित है।

'चिकित्सा'

'मनुष्य की चिकित्सा' के सिलसिले में जर्मनी में किये गए प्रयोगों से इस राख की उपयोगिता कई रोगों से साबित हुई थी—**दीर्घ चर्म रोगों और घावों में, नासा-संकुलता** (Nasal Congestion) **में, बूढ़े-बूढ़ियों की कमजोर आँखों में, सर्दी, जुकाम और गिल्टियों में, सन्धिवाह में, दस्त, कैन्सर, गुर्दों के दर्द में, जठर-शोथ** (Gastritis), **आधासीसी** (Migraine), **में, स्नायु-रोगों में व बच्चों के झगड़ालू स्वभाव में।**

इसकी दवाइयाँ चूर्ण, मरहम, क्रीम या आँखों के लोशन के रूप में बहुत साधारण तरीके से बन सकती हैं।

कृषि

कृषि में इसका उपयोग इस विचार की पुष्टि के लिये हुआ है कि पौधों की शक्ति मिट्टी और वायु से ली हुई सामग्रियों पर आधारित है। आक्सीजन के पुनर्चक्रीकरण की क्रिया से वायुमण्डल का बहुत प्रभाव उस विकास पर पड़ता है। देखा गया है कि जब पौष्टिक तत्त्व वायुमण्डल में विपुल मात्रा में उपलब्ध होते हैं, तब पौधों का विकास अच्छा होता है। **इस यज्ञ से वायुमण्डल में पौष्टिक तत्त्व बढ़ते हैं** जिससे अधिक जनन-क्षमता वाले बीज पैदा होते हैं जिनमें अङ्कुर जल्दी आते हैं। पराग में भी अच्छे गुण पैदा होते हैं। पौधों में अधिक शिराएँ तथा अधिक बड़ी शाखाएँ पैदा होती हैं जिससे पौधों में जल और पौष्टिक तत्त्वों के सञ्चार में वृद्धि होती है। इससे प्रजनन शक्ति भी बढ़ती है। पर्णहरित और श्वास-सञ्चार में भी लाभ हुआ करता है। इससे आक्सीजन के प्राकृतिक चक्र में

तेजी आती है। पर्याप्त तत्त्वों के मिलने से पौधों की ज को खुराक की खोज में कम दूर तक फैलना पड़ता जिससे उनकी आपस में स्पर्द्धा कम हो जाती है।

यज्ञ की सामग्रियों के मिलने से भूमि में पानी सोखने की शक्ति बढ़ती है।

इस यज्ञ से कुछ भौतिक तत्त्व मिट्टी में एक दूसरे को प्रभावित करते हैं जिससे मिट्टी के तत्त्वों की पौष्टिक शक्ति बढ़ जाती है। यदि मिट्टी में पौष्टिक तत्त्व न हों तो यज्ञ की राख से पैदा हो सकते हैं।

स्लाइडों से पता चलता है कि यज्ञ के वातावरण में पले हुए पौधों के कोषों की रचना में अन्तर आता है। सबके पास स्लाइडों इत्यादि की सहूलियत होती नहीं, उसकी आवश्यकता भी नहीं होती है। साधारण मनुष्य अपनी साधारण बुद्धि और साधारण अनुभवों से इन बातों को महसूस कर सकता है।

दुनिया में जहाँ भी कृषि और बागबानी के सिलसिले में लोगों ने इस यज्ञ का प्रयोग किया है उन्होंने पाया है कि दोनों प्रकार की फसलों में आमूल-चूल परिवर्तन हुआ करता है।

कुछ व्यक्तिगत अनुभव

आयरलैंड में एक बंजर खेत को आबाद करने में घोंघों का व्यापक और खतरनाक प्रकोप प्रारम्भ हुआ। **अग्निहोत्र यज्ञ** से घोंघे काबू में आ गये थे, थोड़े-से घोंघे स्वाभाविक ढंग से रहे थे लेकिन ये कोई विशेष हानि नहीं कर पाये थे।

एग्रो-बजनेस (कारखानेदार कृषि) की छः पुरानी अस्वस्थ और मरियल मुर्गियाँ उन्हें दी गयी थीं। उनकी खुराक में **यज्ञ की राख** मिलाने से तथा उनके शरीर पर उसे डालने से धीरे-धीरे सबकी परिस्थिति में सुधार हुआ, सबने फिर अण्डे देना शुरू किया था। दो मुर्गियों ने अपने अण्डों को सेना आरम्भ किया, उनके बच्चे भी निकले थे। **इस प्रकार सङ्करित** (Hybrid) **एग्रो-बिजनेस की मुर्गियाँ अण्डे सेना आरम्भ करें, और उनके बच्चे जिन्दा निकलें—यह एक असाधारण, लगभग असम्भव, बात समझी जा सकती है।**

भारत में और आयरलैंड में इस यज्ञ के द्वारा चूहों के प्रकोप की समस्या हल हुई थी। पशुओं के

पिस्सू तथा किलनी भी उसके प्रयोग से छूट जाते हैं।

महाराष्ट्र की प्राकृतिक परिस्थिति अंगूर की खेती के लिए बहुत अनुकूल नहीं है, इसलिए पुणे के कृषि महाविद्यालय में इस सिलसिले में कुछ प्रयोग किये गए। आधुनिकतम प्रयोग काफी निराशाजनक निकले। बाद को **अग्निहोत्री यज्ञ** का उपयोग हुआ था। दोनों प्रयोगों के परिणाम अगले पृष्ठ पर दिये हुए हैं।

जर्मनी में वैज्ञानिकों ने गायों पर कुछ प्रयोग किये थे। **अग्निहोत्री मरहम और क्रीम लगाने से परिसर्प** (Herpes) का प्रकोप रुक गया था। एक गाय के टखने में काफी दिनों से सूजन और दर्द की शिकायत चल रही थी। **होम-चिकित्सा से गाय तीन दिनों में सीधी खड़ी हो गयी और एक हफ्ते में बिल्कुल स्वस्थ हो गयी। थन का सूजना भी अग्निहोत्री मरहम से ठीक हुआ।**

दस्त की शिकायत में सिर्फ एक ही दिन गाय की खुराक में **यज्ञ की राख** मिलाने से पूरा दूध देने लगी।

गोशाला में यज्ञ करने से गाएँ बहुत खुश होती थीं। एक महीने तक उस प्रयोग को चलाने से **दूध और मलाई दोनों की प्राप्ति बढ़ गयी थी।**

प्रयोग	वैज्ञानिक प्रक्रिया से	अग्निहोत्री यज्ञ से	अग्निहोत्री और वैज्ञानिक प्रक्रिया से
१. अङ्कुरों का फूटना	६ महीने से अधिक लगे	२१ से २८ दिन लगे	—
२. कलमों का जमना	८०%	१००%	१००%
३. गुच्छों का विकास	औसत वजन ०.४५ किलो	औसत वजन ०.४५ किलो	औसत वजन ०.५२५ किलो
४. गुण	टी.एस.एस. २२%	टी.एस.एस. २४%	टी.एस.एस. २३%
५. रोग	काफी रोग लगे	कोई रोग नहीं लगा	कम रोग लगे
६. रंग	हरा-पीला	सुनहरी-पीला	हल्का पीला
७. फसल में हानि	लगभग १०%	कुछ नहीं	१०%

अग्निहोत्र होम की पद्धति

सूर्योदय की आहुतियाँ

ॐ सूर्यो ज्योतिर्ज्योतिः सूर्यः स्वाहा।

ॐ सूर्यो वर्चो ज्योतिर्वर्चः स्वाहा।

ॐ ज्योतिः सूर्यः सूर्यो ज्योतिः स्वाहा।

ॐ सजूर्देवेन सवित्रा सजूरुषसेन्द्रवत्या।
जुषाणः सूर्यो वेतु स्वाहा।

सूर्यास्त की आहुतियाँ

ॐ अग्निर्ज्योतिर्ज्योतिरग्निः स्वाहा।

ॐ अग्निर्वर्चो ज्योतिर्वर्चः स्वाहा।

ॐ अग्निर्ज्योतिर्ज्योतिरग्निः स्वाहा।

ॐ सजूर्देवेन सवित्रा सजूरात्र्येन्द्रवत्या।
जुषाणो अग्निर्वेतु स्वाहा।

—यजुर्वेद, अध्याय ३/१०

समय—यज्ञकर्त्ता के रहने के स्थान का ठीक सूर्योदय और सूर्यास्त।

अग्नि—गाय या गोवंश के कण्डों से निर्मित अग्नि का प्रयोग करना चाहिए। आहुति देते समय अग्नि को पूर्ण प्रज्वलित रखना चाहिए। **होम में गोघृत प्रयोग किया जाय।** अग्नि-प्रज्वलन हेतु दीपक, गुग्गल या कपूर का प्रयोग करें।

मन्त्रोच्चारण—मन्त्रोच्चारण उदात्तादि चिह्नों के अनुकूल उचित विराम के साथ करना चाहिए।

आहुति—प्रत्येक आहुति के लिये, जितनी अंगुलियों के अग्रभाग में ली जा सके, इतनी सामग्री लेनी चाहिये। आहुति पूर्ण भस्म होने तक मन एकाग्र रखना चाहिये।

–संरक्षण या विनाश, परिशिष्टाध्याय-चार

यद्यपि यज्ञ के महत्त्व एवम् उपयोगिता को सिद्ध करने में यह लेख पूर्ण समर्थ है, तथापि होम की महत्ता को किस द्रुतगति से पाश्चात्य देश स्वीकार कर रहे हैं, इसके ज्ञान के लिए मद्रास के दैनिक "दि हिन्दू" में प्रकाशित श्री के. पी. नारायणन् के लेख

को भी पाठकों के समक्ष प्रस्तुत कर रहा हूँ। जिससे नित्य-नये अनुसन्धानों की कसौटी पर यज्ञरूपी कुन्दन चमकता जा रहा है और वैदिक ऋषियों के ज्ञान की महत्ता का उद्घोष कर रहा है।

प्रदूषण-निवारण की वैदिक विधि

सन् १९८४ की २–३ दिसम्बर के बीच की रात्रि में अपनी पत्नी त्रिवेणी (३६ वर्षीया) को उलटी करते सुन श्री एस. एल. कुशवाहा (४५ वर्षीय) की नींद रात्रि में डेढ़ बजे खुल गयी। श्री कुशवाहा अध्यापन कार्य करते हैं। शीघ्र ही वे स्वयं और उनके बच्चे भी खाँसने लगे। वे सभी सीने में दर्द का अनुभव करने लगे, उनकी आँखों मे जलन होने लगी तथा सभी का दम घुटने लगा। घर से बाहर निकले तो देखा कि पूरे मौहल्ले में हाय-तौबा मची हुई है। तभी किसी ने कुशवाहा को लगभग एक मील दूर स्थित **यूनियन कार्बाइड फैक्टरी** से गैस रिसने की बात बतायी।

वे सभी भीड़ से साथ भागने की सोच ही रहे थे कि त्रिवेणी ने कहा–"हम सब **अग्निहोत्र (हवन)** क्यों न

करें?" उस पूरे परिवार ने **यज्ञ** किया और **२० मिनट के अन्दर ही एम.आई.सी. गैस का दुष्प्रभाव समाप्त हो गया।**

३३ वर्षीय श्री एम.एल. राठौर अपनी पत्नी, चार बच्चों, माँ तथा भाई के साथ भोपाल रेलवे स्टेशन के निकट रहते थे। उस क्षेत्र मे एम.आई.सी. गैस के विष के फलस्वरूप दर्जनों व्यक्ति मर गये। राठौर विगत ५ वर्षों से नित्य **यज्ञ** करते हैं। अपने पूरे परिवार को साथ बिठाकर **वे यज्ञ करने लगे और दैनिक यज्ञ के मन्त्रों के समाप्त होने पर त्र्यम्बक यज्ञ शुरू कर दिया।**

भोपाल में गैस से संत्रस्त लोगों में दो की यह कहानी है। **यज्ञ से इन दोनों परिवारों पर गैस का कोई दुष्प्रभाव नहीं पड़ा।** अब यह जानने का प्रयास किया जा रहा है कि उस संकट के समय भोपाल में कितने अन्य परिवारों ने यज्ञ किया था।

अग्निहोत्र वैदिक यज्ञ का सूक्ष्मतम रूप है। **यज्ञ प्रकृति के बायोरिद्म पर आधारित है।** अमेरिकी मनोवैज्ञानिक श्री बेरी रैथनर—जो आजकल **पुणे विश्वविद्यालय में अग्निहोत्र पर शोध का काम कर**

रहे हैं—का कहना है कि, ''अग्निहोत्र वायुमण्डल में एक विशिष्ट ढंग का प्रभाव उत्पन्न करता है और उसका मानव मन पर चिकित्सकीय (थेराप्युटिक) प्रभाव पड़ता है। उस चिकित्सकीय प्रभाव की आयुर्वेद में स्पष्ट चर्चा मिलती है।''

अधिकांश लोग अब यह स्वीकार करने लगे हैं कि जो कुछ भोपाल में हुआ, वह तो प्रारम्भ मात्र है। इस प्रकार की दुर्घटना शृङ्खला का रूप ग्रहण कर सकती है और प्रदूषण एक अपरिहार्य खतरा बन गया है।

इसका एक हल मिला है। विभिन्न महाद्वीपों में विगत १३ वर्षों से इस दिशा में अध्ययन किया जा रहा है कि इसका हमारे मस्तिष्क, हमारे शरीर और इस धरा पर क्या प्रभाव पड़ता है। श्री रेथनर का कहना है कि, ''प्रदूषण-निवारण का काम पूरी दुनिया में एक साथ करना चाहिये। मुद्दा मात्र भोपाल के कारबाइड कारखाने से गैस रिसना ही नहीं है। मुद्दे की बात तो यह है कि पूरी धरती का वायुमण्डल प्रदूषित हो रहा है।''

इस धरा पर प्राचीनतम ज्ञान हमें वेदों द्वारा उपलब्ध है। वेदों में उस परिस्थिति का हल वर्णित है, जिसका सामना आज हमें करना पड़ रहा है। वेदों के एक खंड में प्रदूषण द्वारा नगरों के विध्वंस का उल्लेख है। वैज्ञानिक उपन्यास और कहानियाँ तो लिखी गयीं, पर यदि १० वर्ष पहले कोई लिखता कि पश्चिमी तथा पूर्वी यूरोप के आधे जंगल मर गये हैं या मर रहे हैं, तो उसे पागल कहते। किसी ने कभी इसकी कल्पना भी न की थी कि एक दिन हम वर्षा के जल को प्रयोगशालाओं में भेजेंगे और यह जाँच करायेंगे कि इसमें अम्लता कितनी है, और वह अम्लता मानव, नदियों तथा भूमि की सहन-क्षमता के अन्दर है या नहीं?

रैथनर का कहना है—मूल प्रश्न तो जीवन जीने की विधि का है। रैथनर का विचार है कि "हमें अपने व्यक्तिगत और सामूहिक जीवन का गम्भीरतापूर्वक अध्ययन करना चाहिये और देखना चाहिये कि हमारा जीवन कितना प्रकृति के अनुरूप है। प्रकृति भी हम स्वयं हैं। अतः समस्या स्वयं अपने से तालमेल में रहने की है।"

रैथनर का कथन है, "भोपाल-काण्ड को कई दृष्टियों से देखा जा सकता है। उसमें एक वैयक्तिक स्तर है। मैं अपने और अपने परिवार वालों की सुरक्षा के लिये क्या कर सकता हूँ? दूसरा दृष्टिकोण अधिक व्यापक है। सरकार को अपने नागरिकों की सुरक्षा के लिये क्या करना चाहिये?"

अग्निहोत्र का इस दिशा में बड़ा महत्त्वपूर्ण योगदान है। विश्व की भाषाओं में ऐसी कोई बोली जाने वाली भाषा नहीं है, जिसमें अनेक **अग्निहोत्र-कर्त्ताओं** का उल्लेख न मिले।

चार देशों में **अग्निहोत्र** का प्रचलन काफी बढ़ा है। वे देश हैं—अमेरिका, चिली, पोलैंड और **पश्चिमी जर्मनी।** अमेरिका में छठे दशक में '**नया युग**' (न्यू एज) नामक एक आन्दोलन चला। अमेरिका के पश्चिमी और पूर्वी समुद्रतटवर्ती क्षेत्र में अग्निहोत्र करने वालों की संख्या खासी है। अमेरिका अकेला देश है जो इस बात पर गर्व कर सकता है कि, उस देश में ९ सितम्बर १९७८ से अखण्ड हवन साढ़े छः वर्षों से* दिन-रात

* यह सूचना लेख लिखते समय की है।

चल रहा है। उसका नाम है—'**अग्निहोत्र प्रेस फार्म**'। वाशिंगटन-स्थित ह्वाइट हाउस से मोटर द्वारा उस स्थान तक मात्र एक घंटे में पहुँचा जा सकता है।

मैडीसन (वर्जीनिया) में प्रथम वैदिक यज्ञशाला का निर्माण हुआ। इस स्थान तक वाशिंगटन डी.सी. से डेढ़ घंटे में पहुँचा जा सकता है। यह यज्ञशाला पर्वतीय क्षेत्र में है, जिसे कभी सबसे कम प्रदूषित क्षेत्र माना जाता था। इसका उद्घाटन २२ सितम्बर १९७३ को हुआ, और उसके बाद ही पाश्चात्य जगत् में अग्निहोत्र का प्रचलन बढ़ा। यहीं से यह इस धरा के चारों कोनों तक पहुँचा। यज्ञशाला मात्र एक कमरा होता है जिसमें लोग शान्त, मौन रहते हैं और प्रतिदिन सूर्योदय तथा सूर्यास्त के समय यज्ञ होता है। वहाँ किसी चीज की पूजा नहीं होती, वहाँ कोई पुजारी नहीं होता। ऐसी सैकड़ों यज्ञशालाएँ विश्वभर में स्थापित हैं। अग्निहोत्र कहीं भी किया जा सकता है—कमरे के अन्दर भी और बाहर भी। **परन्तु यदि यज्ञशाला में किया जाए, जहाँ सभी मौन हों, तो अधिक लाभकारी सिद्ध होता है।**

चिली के एंडीज पर्वत पर एक विशिष्ट यज्ञशाला का निर्माण हुआ है। वहाँ अनेक ने अनेक रोगों से मुक्ति प्राप्त की। यहाँ तक कि घायल और बीमार पशु भी स्वतः वहाँ चले आते हैं और जब तक रोगमुक्त नहीं होते, वहीं रहते हैं। अभी हाल ही में उस क्षेत्र में **एक बर्फीला तूफान आया। अग्निहोत्र करने वालों के परिवार को कोई क्षति नहीं पहुँची।** (ठीक उसी प्रकार जैसे कि भोपाल में अग्निहोत्र करने वाले सकुशल रहे।)

पोलैंड में वैज्ञानिकों के एक दल ने यज्ञोपचार का प्रचार किया है। पोलैंड में १७ स्थानों पर यज्ञकर्त्ताओं के केन्द्र हैं। जब वहाँ अग्निहोत्र का प्रचलन शुरू किया गया तो घोषित किया गया था कि मात्र वे ही आयें जो उसी दिन से अग्निहोत्र शुरू कर देने के लिये तैयार हों। अग्निहोत्र के पहले ही दिन २०० वैज्ञानिक उसमें भाग लेने आ गये।

चौथा देश **पश्चिमी जर्मनी** है जहाँ अग्निहोत्र का व्यापक प्रचार हुआ।

अग्निहोत्र विधि

अग्निहोत्र के लिए अपेक्षित है एक ताँबे का बना हवनकुण्ड तथा कंडी या उपली, शुद्ध घी तथा चावल। चावल अपने रासायनिक योगजों के कारण अग्निहोत्र में प्रयुक्त होता है। गोबर के कंडे का ऐंटीसेप्टिक होना एक सिद्ध तथ्य है। शुद्ध घी बड़ा ही प्रभावकारी है। ताँबे की महत्ता अति प्राचीन काल से स्वीकार की जाती रही है। अग्निहोत्र के लिये निर्धारित सूर्योदय और सूर्यास्त का समय भी बड़ा महत्त्वपूर्ण है। उस समय सूर्य से नानाविध शक्तियाँ प्रस्फुटित होती रहती हैं।

—दि हिन्दू, मद्रास

मद्रास के सेनेटरी कमिशनर डा. कर्नल किंग, आई.एम.एस. ने घी और चावल में केसर मिला कर जलाने से रोगों के कीटाणुओं का शीघ्र नाश होते देखा है।

विस्मयकारिका एक अन्य सूचना

नवनीत (बम्बई) के विज्ञान-वार्ता स्तम्भ में 'अन्वेषी' द्वारा सङ्कलित अग्निहोत्र विश्वविद्यालय, अमेरिका द्वारा यज्ञ के परीक्षणों का निष्कर्ष तो हमारे अर्धनास्तिक नव-शिशुओं, विज्ञान के छात्रों को विस्मित करने वाला ही है।

'महाराष्ट्र के स्वामी बसन्त परांजपे ने अमेरिका की राजधानी वाशिंगटन में **अग्निहोत्र विश्वविद्यालय** नामक एक नये विश्वविद्यालय की स्थापना की है। यह असाधारण विश्वविद्यालय अमेरिकी किसानों को बताता है कि रासायनिक खाद और कीटनाशक दवाओं के प्रयोग के स्थान पर **यज्ञ से फसलों के सब रोग दूर किये जा सकते हैं।** विश्वविद्यालय ने जो प्रयोग किये हैं, **उनमें मन्त्रोच्चार और घी की आहुति से फसलों को चौगुना करने में सफलता मिली है।** यज्ञ का नया वैज्ञानिक नाम है **होम थेरेपी फार्मिस।**

इन प्रयोगों से यह भी पता चला है कि खेतों पर नियमित रूप से यज्ञ करने से वातावरण शुद्ध होता है,

और पौधे तेजी से बढ़ते हैं। एक यज्ञ २०० एकड़ के खेतों के पौधों का स्वरूप बदलने में सक्षम है। अग्निहोत्र विश्वविद्यालय (अमेरिका) के वैज्ञानिकों ने अपने खेतों पर जो प्रयोग किये हैं, उनसे यह भी सिद्ध हो गया है कि यज्ञ का प्रभाव पौधों की जड़ों तक होता है, और उससे जमीन में ज्यादा नमी बनी रहती है।

पौधों में लग जाने वाले कीटाणुओं के नाश के लिये विश्वविद्यालय द्वारा **यज्ञ की राख और गोबर के खाद के प्रयोग की सिफारिश भी की जाती है। पानी में राख मिलाकर उसकी सिंचाई से पौधों के कीटों को नष्ट करने की शक्ति मिलती है। मन्त्रोच्चार के साथ की गयी सिंचाई इस शक्ति को और बढ़ा देती है।**

यज्ञ के धुएँ से विश्वविद्यालय के वैज्ञानिकों ने दक्षिण अमेरिका की फसलों को हानि पहुँचाने वाले **आलू वीनी** नामक कीटाणु को समूल नष्ट करने में सफलता प्राप्त की है। इन वैज्ञानिकों के दावे के अनुसार धुआँ आठ किलोमीटर तक चक्कर लगाता है और वहाँ की वायु का प्रदूषण समाप्त होकर उस क्षेत्र की फसलों का स्वस्थ विकास होता है। **— नवनीत,** बम्बई

पूजा ही नहीं चिकित्सा भी

यज्ञीय सामग्रियों के परीक्षण

प्लेग के टीके के आविष्कारक डा. हैफकिन (फ्रांस) ने लिखा—अग्नि में गोघृत का हवन रोगाणुओं का विनाशकारी होता है।

फ्रांस के ही विज्ञान प्रोफेसर 'ट्रिल्वर्ट' के अनुसार जलती हुई शक्कर खाण्ड के धुएँ में वायु-शोधन की विलक्षण क्षमता होती है। उन्होंने अपने प्रयोगों में इससे क्षय (टी.बी.), चेचक, हैजा आदि रोगों के विषाक्त कीटाणुओं का नाश होते पाया। इसी प्रकार डा. एम. ट्रेल्ट ने भी मुनक्का, किशमिश आदि फलों को जलाकर देखा तो उनको आश्चर्य हुआ कि इससे सन्निपात ज्वर (टाइफाइड) के कीटाणु ३० मिनट में ही नष्ट हो गये और घंटे दो घंटे में तो दूसरे अन्य भयावह रोगाणु भी विनष्ट हो गये थे।

उपरोक्त इन वैज्ञानिक परीक्षणों के विवरणों को पढ़कर वैदिक ऋषियों के प्रति श्रद्धापूर्वक नमन किये विना कोई भी सत्यान्वेषी व्यक्ति नहीं रह सकता

जिनकी यश:पताका के रूप में भारतीय संस्कृति की अनुपम भेंट "**अग्निहोत्र यज्ञ**" संसार को कल्याण का मार्ग दिखा रहा है। हम इस अपनी अमूल्य धरोहर को सुरक्षित रखें एवं इसका प्रचार-प्रसार करें। पश्चिम की ओर ही दृष्टि लगाकर यह विचारना कि नवीन ही ठीक है तथा पूर्व का पुराना सब कुछ परिहेय है—त्याज्य है, यह एक भारी भूल सिद्ध होगी। हमें अपनी प्राचीन संस्कृति एवं सभ्यता का ही गहन अध्ययन करना चाहिये, तभी हम उन ऋषियों के अगाध ज्ञानमय सरित् प्रवाह में स्नान कर अपना कल्याण कर सकेंगे।

नमः परम ऋषिभ्यो,
नमः परम ऋषिभ्यः।

—o—o—o—

मनुष्य लोगों को चाहिए कि जिस **मेघ** से सबका पालन होता है, उसकी वृद्धि वृक्षों के लगाने, वनों की रक्षा करने और **होम करने से सिद्ध करें**, जिससे सबका पालन सुख से होवे।

—ऋषि दयानन्द कृत ऋग्वेदभाष्य, ५/८३/४

"तत्र गच्छ यत्र पूर्वे परेताः।"

आइए! उस पर चलें जिस पर हमारे पूर्वज चले थे।

वेदसुधा

"अयं यज्ञो भुवनस्य नाभिः।"

यह यज्ञ विश्व-शरीर का नाभि-रक्षण केन्द्र है

–यजुर्वेद, २३/६२

"अयज्ञियो हतवर्चा भवति।"

यज्ञ के बिना वर्चस्व नष्ट हो जाता है।

–अथर्व, १२/२/३६

"ईजाना स्वर्गं यन्ति।"

यज्ञ के प्रयोगकर्त्ता सुख और समृद्धि की पराकाष्ठा प्राप्त कर लेते हैं। **–अथर्व, १८/४/२**

"आयुर्यज्ञेन कल्पताम्"

यज्ञ द्वारा आप आयुः-स्वास्थ्य प्राप्त कर सकते हैं।

–यजुर्वेद, १८/२९

ब्राह्मण-वचन

"नौर्हवा स्वर्ग्या यदग्निहोत्रम्।"

यह अग्निहोत्र स्वर्ग की नौका है।

–शतपथ ब्राह्मण

"यज्ञो वै श्रेष्ठतमं कर्म।"

यह ही श्रेष्ठतम कर्म है। **–शतपथ ब्राह्मण**

गीता पीयूष

"नायं लोकोस्त्ययज्ञस्य; कुतो न्य:?"

बिना यज्ञ के इस पृथ्वी पर ही मानव की स्थिति संभव नहीं, फिर अन्यत्र की तो बात ही क्या?

–गीता, ४/३१

"यज्ञशिष्टाशिनः सर्वे मुच्यन्ते सर्व किल्विषैः।"

यज्ञशेष का उपयोग सब क्लेशों को छुड़ाने वाला होता है।

–गीता, ३/१३

"यज्ञः कर्मसमुद्भवः।"

यह यज्ञ मानवीय कर्मठता का प्रतीक है।

–गीता, ३/१४

ऋषि दयानन्द की दृष्टि–
होती यज्ञ से वृष्टि

कहाँ तो वेदावलम्बिनी भारतीय संस्कृति के एकनिष्ठ पुजारी श्री स्वामी दयानन्द सरस्वती जी महाराज और कहाँ उनके पाश्चात्य शिक्षादीक्षित अन्धानुयायी जो श्री स्वामी जी महाराज के नाम को लपेट कर अपने नास्तिक सिद्धान्तों का पोषण करते रहते हैं एवं स्वयं भ्रात मस्तिष्क वाले वे व्यक्ति भारतीय जनता को भी भ्रान्त करते रहते हैं, उन्हीं के अज्ञानतिमिरान्ध चक्षुओं के उन्मीलनार्थ ज्ञानाञ्जन-शलाकारूपी प्रस्तुत सङ्कलन पाठकों की सेवा में यहाँ प्रस्तुत कर रहे हैं।

१. "आरोग्य और अधिक वर्षा होने के लिए एक वर्ष में १०,००० (दश हजार) रुपये में घृतादि का जिस रीति से होम हुआ था, उसी रीति से प्रति वर्ष होम कराइये। परन्तु उनमें से ५,००० (पाँच हजार) रुपये के सुगन्धित घृत-मोहनभोग

का होम वर्षा ही में–कि जिस दिन वर्षा का आर्द्रा नक्षत्र लगे उस दिन से लेके विजय दशमी तक–चारों वेदों के ब्राह्मणों का वरण करा एक सुपरीक्षित धार्मिक पुरुष उन पर रख के होम कराइयेगा। सब से मेरा आशीर्वाद कहियेगा और इस लेख को यथावत् सफल कीजियेगा।''

–ऋषि दयानन्द के पत्र एवं विज्ञापन,
पत्र ४८६, पृ. ४४९

२. ''इस देश में वर्षा प्रायः न्यून होती है। इसके लिए यदि मेरे कहे अनुसार एक-एक वर्ष में १०,००० (दश हजार) रुपयों का घृतादि का नित्यप्रति और वर्षाकाल में चार महीने तक अधिक होम करावेंगे, वैसे प्रतिवर्ष होता रहे तो संभव है कि देश में रोग न्यून और वर्षा अधिक हुआ करे।'' –वही, पत्र ५०२, पृ. ४६३

३. ''होम-हवन से वायु शुद्ध होकर सुवृष्टि होती है, उससे शरीर नीरोग और बुद्धि विशद होती है।

–पूना प्रवचन

४. इस प्रकार **हवन** की विशेष योजना के कारण विशेष उष्णता उत्पन्न होकर **विशेष वृष्टि** उत्पन्न होती है।"

—वही

५. "**सुवृष्टि** और वायु-शुद्धि **होम-हवनादि** से होती है, इसलिए होम-हवनादि करना चाहिए।"

—वही

६. "**यो होमेन सुगन्धयुक्त-द्रव्य परमाणुयुक्त-उपरिगतो वायुर्भवति स वृष्टिजलं शुद्धं कृत्वा वृष्ट्याधिक्यमपि करोति।**" जो वायु सुगन्धित द्रव्य के परमाणुओं से युक्त होम द्वारा आकाश में चढ़ के वृष्टिजल शुद्ध कर देता है और उससे **वृष्टि भी अधिक होती है**, क्योंकि होम करके नीचे गर्मी अधिक होने से जल भी ऊपर अधिक चढ़ता है।

—**ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका**, वेद-विषय विचार

७. "जो होम करने के द्रव्य अग्नि में डाले जाते हैं, उससे धुआँ और भाप (वाष्प) उत्पन्न होते हैं, क्योंकि अग्नि का यही स्वभाव है कि पदार्थों में प्रवेश करके उनको भिन्न-भिन्न कर देता है, फिर वे हल्के हो के वायु के साथ ऊपर आकाश में चढ़

जाते हैं, उनमें जितना जल का अंश है वह भाप (वाष्प) कहाता है और जो शुष्क है वह पृथ्वी का भाग है, उन दोनों के योग का नाम धूम है। जब वे परमाणु मेघमंडल में वायु के आधार से रहते हैं, फिर वे परस्पर मिल के बादल होके **उससे वृष्टि** वृष्टि से औषधि, औषधियों से अन्न, अन्न से धातु।''

–वही

८. ''स्त्री-पुरुषों को चाहिए कि स्वयंवर विवाह करके अति प्रेम के साथ आपस में प्राण के समान प्रियाचरण, शास्त्रों का सुनना और औषधि आदि का सेवन और **यज्ञ के अनुष्ठान से वर्षा करावें।**''

–यजु०, १४/८

९. ''जैसे अच्छे प्रकार सेवन हुई गौ दुग्धादि के दान से सब को प्रसन्न करती है, वैसे ही वेदी में चयन की हुई ईंटें **वर्षा की हेतु होके** वर्षादि के द्वारा सबको सुखी करती हैं।''

–यजु०, १७/२

१०. ''**वर्षा का हेतु जो यज्ञ है**, उसका अनुष्ठान करके नाना प्रकार के सुखों को प्राप्त करो।''

–यजु०, १/१४

११. "अच्छी प्रकार पदार्थों को इकट्ठा कर यज्ञ का अनुष्ठान करना चाहिए जो **वृष्टि व बुद्धि बढ़ाने वाला** है।"
—यजु., १/१९

१२. "अग्नि में जो हवन किया जाता है तथा जिसकी सूर्य अपनी किरणों से खींच कर वायु के वेग से ऊपर मेघमण्डल में स्थापना करता है और फिर वह उसको वहाँ से **मेघ** द्वारा गिरा देता है।"
—यजु., २/८

इन बारह स्थलों के अध्ययन से ऋषि दयानन्द का मन्तव्य स्पष्ट हो जाता है कि वे **वृष्टि यज्ञ** के प्रबल पोषक, समर्थक एवं प्रचारक थे। उन्हीं के विचारों का अनुसरण करने वाले आर्यसमाज के आचार्यों एवं पुरोहितों को अन्धविश्वासी कहना दुःसाहस की पराकाष्ठा है। भविष्य में कोई भी दिग्भ्रान्त व्यक्ति ऋषि दयानन्द का नाम लेकर आर्य जनता को भ्रान्त न कर सके, इसीलिए मैंने '**वृष्टि-यज्ञ-परक**' अनेक स्थलों का एकत्र संकलन कर दिया है, जिससे जिज्ञासु जन लाभ उठायेंगे तथा वृष्टि-यज्ञ को अन्धविश्वास मात्र कहने वालों को समुचित उत्तर देंगे।

शङ्ख एवं घण्टा-ध्वनि से रोगों का नाश

(१) **शङ्ख-ध्वनि**—सन् १९२८ ई. में **बर्लिन यूनिवर्सिटी** ने शङ्ख-ध्वनि का अनुसन्धान करके यह सिद्ध किया है कि शङ्ख-ध्वनि की शब्द-लहरें बैक्टीरिया नामक (संक्रामक रोग के) कीटाणुओं को नष्ट करने में उत्तम और सस्ती औषधि हैं। प्रति सेकेण्ड २७ घनफुट वायु-शक्ति के जोर से बजाया हुआ शङ्ख १२०० फुट दूरी के बैक्टीरिया जन्तुओं को नष्ट कर डालता है और २६०० फुट दूरी तक के जन्तु इस ध्वनि से मूर्च्छित हो जाते हैं और २६०० फुट दूरी तक के हैजा, गर्दनतोड़ बुखार, कम्पज्वर के कीटाणु भी नष्ट हो जाते हैं और ध्वनि-विस्तारक स्थान के पास का स्थान निस्सन्देह निर्जन्तु हो जाता है। मृगीं, मूर्च्छा, कण्ठमाला और कोढ़ के रोगियों के अंदर शङ्ख-ध्वनि की प्रतिक्रिया होती है और वह रोगनाशक होती है। **शिकागो** के डॉक्टर डी. ब्राइन ने तेरह बहरों को

शङ्ख-ध्वनि से ठीक किया था और आज तक न जाने कितने और ठीक हुए होंगे। मेरे एक मित्र केशरीकिशोर जी ने अभी गतमास एक नवयुवक को, जिसका कान बहता था तथा बहरापन था, शङ्ख बजाने का परामर्श दिया, जिससे दस दिनों में उचित लाभ हुआ। प्रयोग अभी चल रहा है।

(२) **घण्टा-ध्वनि—अफ्रीका** के निवासी घण्टे को ही बजाकर जहरीले साँप के काटे हुए मनुष्यों को ठीक करने की प्रक्रिया को पता नहीं कब से आज तक करते चले आ रहे हैं। ऐसा पता लगा है कि **मास्को सैनीटोरियम** में घण्टे की ध्वनि से तपेदिक रोग ठीक करने का सफल प्रयोग चल रहा है। सन् १९२६ में **बुकिंघम** में एक मुकदमा चला था—एक तपेदिक के रोगी ने गिरजाघर में बजने वाले घण्टे के सम्बन्ध में यह दावा अदालत में किया था कि इसकी ध्वनि के कारण मैं बराबर स्वास्थ्यहीन होता जा रहा हूँ और मुझे काफी शारीरिक क्षति पहुँची है। इस पर अदालत ने तीन प्रमुख वैज्ञानिकों को घण्टा-ध्वनि की जाँच के लिये नियुक्त किया। परीक्षण सात महीने किया गया और

अन्त में **वैज्ञानिक-बोर्ड** ने यह घोषित किया कि **घण्टे की ध्वनि से तपेदिक रोग दूर होता है और कहा जाता है कि इससे अन्य कई शारीरिक कष्ट कटते हैं तथा मानसिक उत्कर्ष होता है।**

अभी बजा हुआ घण्टा आप पानी में धो डालिये और उस पानी को उस स्त्री को पिला दीजिये, जिस स्त्री को अत्यन्त प्रसव-वेदना हो रही हो और प्रसव न होतो हो; फिर घंटे भर के अंदर ही सारी आपत्तियाँ को हटाकर सरलतापूर्वक प्रसव हो जाता है।

श्री मनमोहनलाल, एच.एम.डी.
(कल्याण, गोरखपुर)

पधारिये! आपका स्वागत है!

अवस्थिति

कर्मभूमि भारतवर्ष के उत्तर प्रदेश की ऐतिहासिक नगरी मयराष्ट्र (मेरठ) से पश्चिम दिशा में १६ कि०मी० दूर पुण्यसलिला भागीरथी गङ्गा की नहर (निकास शाखा) के पश्चिमी तट पर, ग्राम-भोला एवं टीकरी (जानी) के मध्य-प्रान्त में अवस्थित प्रभात आश्रम अपने स्थापना सम्वत् १९९६ वि० (१९३९ ई०) से ही भारतीय संस्कृति के प्रेमी एवं जिज्ञासु जनों के आकर्षण का केन्द्र रहा है।

यहाँ आने के लिए मेरठ गन्त्री स्थात्र (भैंसाली स्थित रोडवेज) से हर घण्टे-आध-घण्टे के अन्तराल से भोला (सतवाई या मढ़ी) आने वाली गन्त्री (बस) से सर्वप्रथम भोला की झाल आना होगा। यहाँ से दो फर्लांग दूरी पर स्थित कुल भूमि तक आप पैदल अथवा सुविधानुसार उपलब्ध साधनों द्वारा आ सकते हैं।

अथवा बागपत मार्ग स्थित जानी (नहर-पुल) से टीकरी ग्राम होते हुए भी आश्रम पहुँचा जा सकता है।

उद्देश्य

अद्भुत प्रज्ञा के धनी—वैदिक विद्वत्-शिरोमणि—श्रद्धेय **श्री स्वामी समर्पणानन्द सरस्वती जी महाराज (पं० बुद्धदेव विद्यालङ्कार)** ने विश्व मानवता के उत्कर्ष हेतु भारतीय संस्कृति के पुनर्वैभव के अपने संकल्प की पूर्ति के लिए उपक्रमत्वेन-संस्थापित संस्था **वर्णाश्रम संघ** के एक केन्द्र के रूप में **प्रभात आश्रम** की स्थापना वर्तमान (सं० २०४६ वि०) से ५० वर्ष पूर्व की थी। उनका विचार था कि विभिन्न (पूँजी, साम्य, समाज आदि) वादों में भ्रमित हो नाना प्रकार की समस्याओं से विषण्ण विश्व-मानवता के उद्धार एवं उत्कर्ष हेतु सर्वप्रथम विश्ववारा भारतीय संस्कृति के प्रत्येक पक्ष को वर्तमान युग के परिप्रेक्ष्य में निखार कर तर्कयुक्त एवं बोधगम्य बना उसे पुनः जन-जन तक पहुँचाना होगा। इसी से सम्पूर्ण विश्व सभी समस्याओं से मुक्त होकर चिरप्रतीक्षित अपने लक्ष्य—शान्ति एवं

सौख्य—को प्राप्त कर सकेगा। क्योंकि अब यही केवल एकमात्र स्रोत बचा है जहाँ से विश्व भर के बुद्धिजीवियों को आशा की किरण आती दृष्टिगोचर हो रही है (जैसा कि धीरे-धीरे इस तरफ और अधिक आकृष्ट होते चले आने की उनकी गतिविधियाँ सङ्केत दे रही हैं)। इन्हीं सब तथ्यों को दृष्टिगत रखते हुए मानव धर्म एवं मानव संस्कृति का नव अभ्युदय—नवप्रभात—लाने के महान् उद्देश्य की पूर्ति हेतु ही आपकी इस प्रिय संस्था प्रभात आश्रम की उनके द्वारा स्थापना की गयी थी।

प्रवृत्तियाँ

उपर्युक्त उद्देश्य की पूर्ति हेतु श्रद्धेय श्री स्वामी जी महाराज के उत्तराधिकारी शिष्य (वर्णाश्रम संघ के सर्वाधिकारी प्रधान), वेद, व्याकरण एवं ब्राह्मण ग्रन्थों के मर्मज्ञ, तपोनिष्ठ पू० **श्री स्वामी विवेकानन्द जी सरस्वती** के आचार्यत्व में प्राचीन भारतीय (गुरुकुल) शिक्षा-पद्धति के माध्यम से एक शिक्षाकेन्द्र का संचालन विगत १७ वर्षों से प्रभात आश्रम में हो रहा है जिससे मानवीयता की प्रसारिका भारतीय संस्कृति का

बाल्यकाल से ही विद्यार्थी के जीवन में समावेश हो सके। "**शैक्षिक वातावरण में तुल्य आहार, विहार एवं व्यवहार के साथ प्रत्येक को उसकी योग्यतानुसार उचित शिक्षा**"–भारतीय संस्कृति के इस क्रान्तिकारी सिद्धान्त को क्रियात्मक रूप से आचरण में लाने के लिए आवश्यक कटिबद्धता के साथ-साथ अपने आश्रमीय दैनिक व्यवहार माध्यम में **संस्कृत भाषा** के नियमित अभ्यास से उसको पुनः 'लोकभाषा' की विलुप्त प्रतिष्ठा देने के स्वप्न को साकार करने के अपने प्रयासों के कारण यह निःशुल्क शिक्षा-संस्थान जहाँ राष्ट्रभक्तों, सिद्धान्तवादियों एवं संस्कृत-प्रेमियों के आकर्षण एवं उत्सुकता का विषय रहा है वहीं योग्यतात्मक अध्ययन-अध्यापन एवं शिक्षण के क्षेत्र में भी इस गुरुकुल महाविद्यालय ने अपनी अङ्कुरावस्था की इस स्वल्पावधि में प्राप्त अभूतपूर्व सफलता के कारण पर्याप्त ख्याति अर्जित की है।

आर्य समाज के शताब्दी समारोहों के अवसर पर मेरठ, अमृतसर, यमुनानगर, कानपुर, दिल्ली, बनारस, अजमेर, लखनऊ आदि में इस संस्था के छात्रों ने

वेदपाठ तथा अन्य प्रतियोगिताओं में गौरवपूर्ण स्थान प्राप्त किया है। समय-समय पर इसके छात्रों ने विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन द्वारा आयोजित अखिल भारतीय वाद-विवाद प्रतियोगिता, दिल्ली विश्वविद्यालय द्वारा आयोजित अखिल भारतीय सद्यः संस्कृत भाषण प्रतियोगिता, गुरुकुल कांगड़ी दिश्वविद्यालय, कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय, राष्ट्रिय संस्कृत संस्थान दिल्ली एवम् अखिल भारतीय धर्मसंघ द्वारा आयोजित संस्कृत की विभिन्न प्रतियोगिताओं तथा विरजानन्द ट्रस्ट की यजुर्वेद एवं पाणिनीय अष्टाध्यायी कण्ठस्थीकरण प्रतिस्पर्धाओं में गौरवपूर्ण विजय प्राप्त कर वैजयन्तियाँ प्राप्त की हैं। साथ ही प्रभात आश्रम के छात्रों ने महर्षि दयानन्द निर्वाण शताब्दी अजमेर के विविध सम्मेलनों में भी भाग लेकर अनेक प्रतियोगिताओं एवं सम्पूर्ण यजुर्वेद कण्ठस्थीकरण के सफल प्रदर्शन में सर्वप्रथम स्थान प्राप्त किया है।

अनेक स्नातक छात्र वर्तमान में विभिन्न विश्वविद्यालयों में शोधकार्यरत हैं। (जिनमें से कुछ छात्र अभी हाल में शोधकार्य पूर्ण कर उन्हीं विश्वविद्यालयों में सेवा-संलग्न

हुए हैं)। सम्प्रति, अपने स्नातकोत्तर छात्रों की बौद्धिक एवं मानसिक क्षमता के विकास को दृष्टिगत रखते हुए उनके विचारों में दुराग्रह एवं प्रतिबद्धता के निवारण हेतु एक अनुसन्धान केन्द्र को (**स्वामी समर्पणानन्द वैदिक शोध संस्थान** के रूप में) विगत साढ़े चार वर्षों से विकसित किया जा रहा है जिसके अन्तर्गत स्थापना काल सं० २०४१ वि० (सन् १९८४) से ही १३-१४ जनवरी एवं १ अगस्त को ''**विद्वत्-विचारगोष्ठी**' का क्रम नियमित रूप से चल रहा है। इधर संस्थान जहाँ विभिन्न कार्यक्रमों एवं प्रयोगों से प्राप्त निष्कर्षों, प्रमाणों तथा उपलब्धियों का प्रचार-प्रसार अपने त्रैमासिक मुखपत्र (शोधपत्रिका) **पावमानी** तथा समय-समय पर अन्य लघु प्रकाशनों के माध्यम से करता रहता है, वहीं वर्तमान युग के जनजीवन को ध्यान में रखते हुए तथा सामान्य शिक्षित एवं अशिक्षित जनता के हित को भी देखते हुए आश्रम के कुलवासी सदस्य समय-समय पर विभिन्न ग्रामों एवं नगरों में 'संस्कृति-प्रचार कार्यक्रम' (यज्ञादि) के आयोजनों द्वारा जनजागृति का प्रयास करते रहते हैं। इस प्रसङ्ग में संस्था द्वारा अपने सीमित

साधनों के होते हुए भी उड़ीसा में १९७७ में आयोजित **विश्वशान्ति महायज्ञ** तथा १९८९ में किये गये **विश्वकल्याण महायज्ञ** ऐतिहासिक दृष्टि से विशेष उल्लेखनीय रहेंगे। प्रान्त के वनवासी-बहुल ग्रामीण क्षेत्र राजबुडासम्बर (जिला सम्बलपुर) में सन् १९७७ तथा १९८९ में क्रमशः सात तथा चार दिनों तक भव्य समारोहपूर्वक आयोजित इन 'संस्कृति प्रचार-प्रसार शिविरों' का स्थानीय जनता पर स्थायी प्रभाव देखने में आया। विधर्मियों के षड्यन्त्रों से संत्रस्त अभाव-पीड़ित इस क्षेत्र में दोनों ही अवसरों पर लगातार चले 'विश्वभृत् भण्डारे' तथा 'वस्त्र एवम् पात्र वितरण' कार्यक्रम जिनसे हजारों आवश्यकतावान् लोग लाभान्वित हुए, विशेष आकर्षण एवं चर्चा का विषय रहे। इसके साथ ही हरिद्वार, गढ़मुक्तेश्वर आदि तीर्थस्थानों पर समय-समय पर कुम्भ, कार्तिक-पूर्णिमा आदि विभिन्न अवसरों पर आयोजित होने वाले मेलों पर आर्यसमाज के पण्डाल से वैदिक संस्कृति एवं सभ्यता के प्रचार-प्रसार में योगदान देकर संस्था उद्देश्य-पूर्ति की दिशा में सार्थक प्रयास करती रही है।

प्रचलित पाश्चात्य चिकित्सा-पद्धतियों की विसङ्गतियों से त्रस्त भारतीय जनता को राहत पहुँचाने हेतु संस्था के चिकित्सकीय (आयुर्विज्ञान) विभाग—**नैरोग्य आश्रम** द्वारा विभिन्न जड़ी-बूटियों से आयुर्वैदिक औषधियों का निर्माण भी चल रहा है जिनमें स्फूर्ति एवं ताज़गी हेतु सेवनीय अमृत पेय "**प्रभात सुधा**" के द्वारा जहाँ सर्दी, जुकाम, थकान, बुखार, सिरदर्द, कब्ज आदि विभिन्न रोगों में विशेष लाभ प्रयोगकर्त्ताओं को दृष्टिगोचर हुआ है, वहीं मोतियाबिन्द के नाश हेतु **निर्मित रामबाण** औषधि "**नेत्र सुधा**" का प्रचार भी ग्रामीण जनता में विशेष रूप से बढ़ रहा है क्योंकि देखने में आया है कि इस औषधि से मोतियाबिन्द में ही नहीं अपितु आँख से पानी निकलनें, नजर गिरने, आँख की लाली, जलन, फुल्ली, दुखनी आदि रोगों में भी शीघ्र लाभ प्राप्त होने लगता है।

प्राचीनता के परिपोषक एवं रक्षक इस शिक्षण-संस्थान में आधुनिक परिप्रेक्ष्य में किया गया भवन-निर्माण भी अपनी अद्भुत वर्णनीयता रखता है। नित्य प्रायः-सायं कुलवासियों के सन्ध्यायज्ञादि

देवकृत्यों के सम्पादनार्थ निर्मित **यज्ञ-मन्दिर** अपनी भव्यता एवं आकर्षकता के कारण अनेकानेक दर्शकों के गुरुकुल-भूमि पधारने में निमित्त बना हुआ है। अतिथियों-आगन्तुकों के विश्राम हेतु सर्वसुविधासम्पन्न अतिथि-भवनों में नन्दनकक्ष, प्रमिलकुञ्ज, वेदकुञ्ज, पावमानी कक्ष अपनी अद्भुत छटा द्वारा आने वाले अभ्यागतों का मन मोह लेते हैं। "**गोमाता का पूजन**" शब्द का सार्थक क्रियान्वयन करने वाली गुरुकुल की गोशाला लघु होते हुए भी संस्कृतिनिष्ठों के आदर के कारण गौरवयुक्त हो दर्शनीय बनी हुई है। विकासशील अवस्था में होते हुए भी शोध संस्थानान्तर्गत पुस्तकालय-साधनाकक्ष, आराधना-कक्ष एवं अग्निलोक तथा महाविद्यालय के सुनियोजित छात्रावास के कृषक-कक्ष आदि विभिन्न भव्य भवन भवन-निर्माण की दृष्टि से भी संस्था को विशिष्ट स्थान प्रदान कराते हैं।

इस प्रकार आपकी यह प्रिय संस्था अपने लघु आकार में होते हुए भी बिना किसी राजकीय दान-अनुदान के केवल आप सबके सहयोग से संगृहीत

सीमित साधनों द्वारा ही इन सब गतिविधियों का संयोजन अपने वर्तमान अध्यक्ष पू० श्री स्वामी विवेकानन्द जी सरस्वती के नीति-निर्देशन एवं संचालन में कर रही है। भविष्य में इसके अतिरिक्त अन्य विभिन्न योजनाओं का क्रियान्वयन भी होना है जो कि जनता-जनार्दन के केवल द्वितीय पुरुषार्थ (अर्थ) की ही नहीं अपितु तन-मन के सक्रिय सहयोग—प्रथम पुरुषार्थ (धर्म)—की भी अपेक्षा रखता है। तभी तृतीय पुरुषार्थ (उद्देश्यपूर्ति = काम)में सफल हो हम सम्पूर्ण विश्व के साथ चतुर्थ पुरुषार्थ (सभी प्रकार के दुःखों से मुक्ति =मोक्ष) की प्राप्ति कर सकेंगे।

पधारिये! आपका स्वागत है।

धर्म एवं संस्कृति आपके पुरुषार्थ की प्रतीक्षा में है।

आपके शुभ आगमन की प्रतीक्षा में,

स्वागतोत्सुकः

व्यवस्थापक-'पावमानी'

गुरुकुल प्रभात आश्रम

भोला. मेरठ (उ०प्र०) २५०५०१. भारत

○ मुद्रक :

आर्यन आफ़सेट प्रेस,

[illegible]

………वैदिक ज्ञान-विज्ञान, धर्म और आयुर्वेद के प्रचार-प्रसार के लिए गुरुकुल प्रभात आश्रम जिस तरह का काम कर रहा है, उसकी तारीफ ही की जानी चाहिए। आज की परिस्थितियों में जब आधुनिकता ने पूरी आक्रामकता के साथ प्राचीन सभ्यता पर हमला बोल रखा है, 'गुरुकुल प्रभात आश्रम' द्वारा अपनी प्राचीन सभ्यता को बनाये रखने का प्रयास सराहनीय है।

दैनिक जनसत्ता (१३ अक्टूबर, १९८९)
(हिन्दी संस्करण–एक्सप्रेस समूह)

प्रकाशक :
स्वामी समर्पणानन्द वैदिक शोध संस्थान
गुरुकुल प्रभात आश्रम (टीकरी)
भोला, मेरठ (२५०५०१), भारत

सम्पादन एवं सज्जा – वाचस्पति मिश्र   मूल्य : २.५०